

भारतीय समाज में स्वर्ण दृष्टिकोण और वंचित वर्गों की सामाजिक स्थिति का विश्लेषण

प्राप्ति: 03.09.2026

स्वीकृत: 16.09.2026

64

डॉ० प्रकाश दास खाण्डेय

असिस्टेंट प्रोफेसर

दादा लख्मी चंट स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ

परफॉर्मिंग एंड विजुअल आर्ट्स, रोहतक

ईमेल: pdkhandey@gmail.com

सारांश

भारतीय समाज सदियों से जातिगत ढांचे पर आधारित रहा है, जहाँ सवर्णों ने धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक रूप से प्रभुत्व स्थापित किया। इस वर्चस्व के परिणामस्वरूप शूद्र, अति-शूद्र, अनुसूचित जाति (SC), अनुसूचित जनजाति (ST) और अन्य पिछड़े वर्ग (OBC) सामाजिक रूप से वंचित और हाशिए पर रहे। सवर्ण दृष्टिकोण परंपरागत रूप से "धर्म" और "कर्म" की अवधारणा से जुड़ा रहा है, जिसमें ऊँच-नीच को नैतिक या दैवी व्यवस्था के रूप में स्वीकार किया गया। बाल गंगाधर तिलक जैसे विचारकों ने वर्ण व्यवस्था को सामाजिक संगठन का स्वाभाविक ढांचा बताया, जबकि डॉ. भीमराव आंबेडकर ने इसे असमानता का स्रोत कहा।

आधुनिक काल में सवर्ण मानसिकता में परिवर्तन अवश्य आया है, परंतु गहराई में जातिगत श्रेष्ठता की भावना अब भी विद्यमान है। आरक्षण नीति, दलित उभार और बहुजन आंदोलन ने सवर्ण समाज में आत्ममंथन की प्रक्रिया शुरू की, लेकिन साथ ही आरक्षण विरोध और सामाजिक बहिष्कार के रूप में प्रतिरोध भी सामने आया। अटल बिहारी वाजपेयी जैसे नेताओं ने समानता और समरसता का समर्थन किया, किंतु व्यवहारिक स्तर पर सवर्ण वर्चस्व की परंपरा अनेक क्षेत्रों में कायम रही।

समकालीन भारत में सवर्ण दृष्टिकोण दो हिस्सों में बँटा दिखता है, एक ओर प्रगतिशील सवर्ण जो सामाजिक न्याय का समर्थन करते हैं, और दूसरी ओर परंपरावादी जो जातिगत वर्चस्व को सांस्कृतिक पहचान मानते हैं। निष्कर्षतः, भारतीय समाज में वास्तविक समानता तभी संभव होगी जब सवर्ण मानसिकता "श्रेष्ठता" से "समानता" की दिशा में रूपांतरित होगी।

**This article has been peer-reviewed by the Review Committee of Shodhmanthan.*

भूमिका

भारतीय समाज सदियों से एक जटिल सामाजिक संरचना पर आधारित रहा है, जिसे जाति व्यवस्था के रूप में जाना जाता है। इस व्यवस्था ने लोगों को जन्म, कर्म और सामाजिक स्थिति के आधार पर विभाजित किया। सवर्ण अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य इस पिरामिड के शीर्ष पर स्थित रहे, जबकि अनुसूचित जातियाँ (SC), अनुसूचित जनजातियाँ (ST) और अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) निचले और हाशिए के स्तर पर रखे गए।

सवर्णों का दृष्टिकोण इन वंचित वर्गों के प्रति हमेशा समान नहीं रहा। यह दृष्टिकोण समय, सत्ता, शिक्षा और सामाजिक चेतना के साथ परिवर्तित होता गया। डॉ. भीमराव आंबेडकर ने कहा था। "जाति केवल सामाजिक विभाजन नहीं है, यह मानसिक दासता की जंजीर है।" यही मानसिकता सवर्ण दृष्टिकोण की जड़ में छिपी रही।¹

भारतीय समाज में जाति व्यवस्था की पृष्ठभूमि

भारतीय समाज में जाति व्यवस्था की जड़ें वैदिक काल तक जाती हैं। वैदिक ग्रंथों में विशेषकर "पुरुष सूक्त" में समाज को चार वर्णों, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र—में बाँटा गया।² प्रारंभ में यह वर्गीकरण मुख्यतः कार्य-आधारित था। प्रत्येक व्यक्ति को उसके पेशे और योग्यता के अनुसार जिम्मेदारी दी जाती थी। ब्राह्मणों को शिक्षा, धर्म और ज्ञान का रक्षक माना गया, क्षत्रियों को शासन और सुरक्षा का दायित्व सौंपा गया, वैश्यों को व्यापार और अर्थव्यवस्था संभालने का कार्य दिया गया, और शूद्रों को समाज की सेवा और श्रम करने के लिए जिम्मेदार ठहराया गया।

समय के साथ यह कार्य-आधारित विभाजन जन्म-आधारित और वंशानुगत बन गया। इसका परिणाम यह हुआ कि व्यक्ति अपने जन्म से ही सामाजिक पद निर्धारित हो गया। इस प्रणाली में SC, ST, और OBC वर्ग सामाजिक और आर्थिक रूप से हाशिए पर रह गए। उन्हें केवल सेवक या अस्पृश्य के रूप में देखा जाने लगा। इस असमानता को सवर्ण मानसिकता ने धार्मिक और सामाजिक वैधता प्रदान की। डॉ. एम. एन. श्रीनिवास के अनुसार, शूद्रों और अन्य वंचित वर्गों को "सामाजिक संरचना की आवश्यकता" के रूप में देखा गया, और उनके अधिकारों की उपेक्षा को धर्मशास्त्रों और परंपराओं के माध्यम से न्याय संगत ठहराया गया।³

इतिहास में कई उदाहरण इस असमानता को उजागर करते हैं। मध्यकालीन भारत में कई दलित और पिछड़े वर्गों के लोग मंदिरों, जलाशयों और शैक्षिक संस्थानों से दूर रखे गए। उदाहरण के लिए, हरियाणा और राजस्थान के कुछ क्षेत्रों में दलितों को कुएँ से पानी लेने की अनुमति नहीं थी। दक्षिण भारत में कुछ मंदिरों में शूद्रों और दलितों का प्रवेश वर्जित था। इसके अलावा, उन्होंने शैक्षिक अवसरों और प्रशासनिक पदों में भी समान अवसर नहीं पाया।

जाति व्यवस्था ने केवल सामाजिक विभाजन ही नहीं, बल्कि आर्थिक असमानता को भी मजबूत किया। शूद्र और दलित वर्ग मुख्यतः कृषि, मजदूरी और सफाई जैसे श्रमिक कार्यों तक सीमित रह गए, जबकि ब्राह्मण और अन्य सवर्ण वर्ग शिक्षा, प्रशासन और व्यापार में प्रभुत्व रखते थे। इसके परिणाम स्वरूप सामाजिक प्रतिष्ठा और सांस्कृतिक प्रभुत्व भी उच्च जातियों के पास रहा। उदाहरण के लिए, शाकाहारी भोजन और धार्मिक अनुष्ठान में केवल उच्च जातियों को शामिल किया जाता था,

जबकि शूद्र और दलित वर्ग बाहर रखा जाता था। इस प्रकार, जाति केवल जन्म से निर्धारित श्रम तक सीमित नहीं रही, बल्कि सामाजिक सम्मान, भोजन, विवाह और धार्मिक गतिविधियों में भी हावी रही।

आधुनिक भारत में संविधान और आरक्षण नीति ने SC, ST और OBC के लिए सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने का प्रयास किया। शिक्षा, रोजगार और राजनीतिक प्रतिनिधित्व में आरक्षण ने दलित और पिछड़े वर्गों के जीवन में सुधार लाने का काम किया। उदाहरण के लिए, आईआईटी, आईआईएम और सरकारी नौकरियों में आरक्षण ने वंचित वर्गों को अवसर प्रदान किए। हालांकि, कई क्षेत्रों में सवर्ण मानसिकता अब भी विद्यमान है और सामाजिक बहिष्कार, भेदभाव और असमानता के स्वरूप बने हुए हैं।

जाति व्यवस्था के प्रभाव को पूरी तरह समाप्त करने के लिए शैक्षिक सुधार, सामाजिक जागरूकता और नीतिगत हस्तक्षेप अत्यंत आवश्यक हैं। इसके अंतर्गत यह सुनिश्चित करना होगा कि समाज के प्रत्येक वर्ग को समान अवसर, सम्मान और अधिकार प्राप्त हों। केवल सरकारी नीतियाँ ही नहीं, बल्कि सामाजिक दृष्टिकोण और मानसिकता में बदलाव भी आवश्यक है। शिक्षा के माध्यम से जाति आधारित पूर्वाग्रह को चुनौती देना और ऐतिहासिक असमानताओं को उजागर करना महत्वपूर्ण है।⁴

सवर्णों की मानसिकता और सामाजिक दृष्टिकोण का ऐतिहासिक विश्लेषण

सवर्ण समाज ने सदियों तक सामाजिक वर्चस्व बनाए रखने के लिए धर्म, संस्कृति और शिक्षा के साधनों का उपयोग किया। डॉ. आंबेडकर ने "जाति का विनाश" में कहा कि सवर्णों ने समानता की शिक्षा तो दी, परंतु उसे व्यवहार में कभी लागू नहीं किया।⁵

प्राचीन ग्रंथ मनुस्मृति में शूद्रों और अछूतों को नीच समझने, उन्हें शिक्षा या धार्मिक कर्म से वंचित रखने की व्यवस्था दी गई।⁶

आदिशंकराचार्य (8वीं सदी) अद्वैत वेदांत के प्रवर्तक होने के बावजूद, उन्होंने वर्णाश्रम धर्म को समाज की स्थिरता के लिए आवश्यक बताया। उन्होंने यह माना कि मनुष्य के कर्म और धर्म उसके वर्ण से निर्धारित होते हैं। उन्होंने दार्शनिक रूप से समानता की बात की, पर व्यवहारिक रूप में जाति-आधारित कर्म व्यवस्था को नहीं तोड़ा।⁷

ब्राह्मणवादी परंपरा ने "शुद्धता" और "अशुद्धता" की अवधारणा गढ़ी, जिसके आधार पर निम्न जातियों को सामाजिक रूप से बहिष्कृत किया गया।⁸ सवर्णों की दृष्टि में यह व्यवस्था "प्राकृतिक" या "दिव्य" थी, जिससे सामाजिक असमानता को धार्मिक समर्थन मिला।

मध्यकालीन भारत में भक्ति आंदोलन और कबीर, रैदास, नामदेव जैसे संतों ने इस सवर्णवादी दृष्टिकोण को चुनौती दी। उन्होंने कहा कि "जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिए ज्ञान" यह सवर्णों की श्रेष्ठता के मिथक पर प्रहार था। परंतु सामाजिक व्यवहार में परिवर्तन सीमित रहा।

कुछ सवर्ण विचारक आंबेडकर को "ब्रिटिश सहयोगी" या "संविधान निर्माता लेकिन हिंदू एकता तोड़ने वाला" बताते हैं कृ जैसे कि राजेंद्र प्रसाद शर्मा (2015) ने अपने लेख "Ambedkar and Nationhood" में लिखा कि "आंबेडकर ने अंग्रेजों के हाथों हिंदू समाज को कमजोर किया।"

यह दृष्टिकोण जातीय प्रभुत्व की मानसिकता को दर्शाता है, जहाँ समानता की माँग को “विभाजन” कहा जाता है।⁹

परंपरा और आधुनिकता के संदर्भ में

औपनिवेशिक काल में जब अंग्रेजों ने जनगणना और प्रशासनिक वर्गीकरण शुरू किया, तब पहली बार जाति को एक “राजनीतिक पहचान” के रूप में दर्ज किया गया।¹⁰ सवर्णों ने इस प्रक्रिया को अपने सामाजिक वर्चस्व पर आघात माना।

स्वतंत्रता के बाद संविधान ने SC, ST और OBC को समान अधिकार और आरक्षण प्रदान किया, परंतु सवर्ण मानसिकता में परिवर्तन तत्काल नहीं आया। समाज के कई हिस्सों में आज भी सवर्ण यह मानते हैं कि आरक्षण “योग्यता के विरुद्ध” है— जबकि यह सामाजिक न्याय का औजार है।¹¹

शिक्षा, नौकरियों और राजनीति में जब वंचित वर्ग आगे आने लगे, तो सवर्ण दृष्टिकोण में एक मिश्रित प्रतिक्रिया दिखाई दी— एक ओर स्वीकार्यता, दूसरी ओर प्रतिरोध। उदाहरण के लिए, मंडल आयोग (1990) के बाद आरक्षण विरोधी आंदोलनों में सवर्णों ने “योग्यता की रक्षा” के नाम पर सड़कों पर विरोध किया, जो उनकी मनोवैज्ञानिक असुरक्षा को दर्शाता है।

आरक्षण और समानता पर सवर्ण दृष्टिकोण

आरक्षण नीति सामाजिक न्याय का प्रतीक है, जिसका उद्देश्य ऐतिहासिक अन्याय की भरपाई करना है। परंतु सवर्ण समाज के एक वर्ग ने इसे “उल्टा भेदभाव” कहा। लुई डुमों के अनुसार, भारतीय समाज “status&based hierarchy” पर आधारित है, इसलिए समानता का विचार सवर्ण मानसिकता के लिए स्वाभाविक नहीं है।

आंबेडकर ने यह स्पष्ट किया कि आरक्षण दया नहीं, बल्कि अधिकार है। बावजूद इसके, सवर्णों का एक बड़ा वर्ग इसे “सुविधा का दुरुपयोग” मानता रहा है। मीडिया और राजनीतिक विमर्श में “मेरिट” की अवधारणा को सवर्ण वर्ग ने अपने पक्ष में परिभाषित किया, जिससे सामाजिक असमानता को वैचारिक रूप से उचित ठहराया गया।¹²

केंद्रीय विश्वविद्यालयों में स्वीकृत और भरे गए पद (30 जून 2025 तक)

राज्यसभा में शिक्षा राज्य मंत्री द्वारा प्रस्तुत किए गए आंकड़ों के अनुसार, केंद्रीय विश्वविद्यालयों में 30 जून 2025 तक स्वीकृत और भरे गए शिक्षण पदों की स्थिति इस प्रकार थी:¹³

प्रोफेसर

श्रेणी	स्वीकृत पद	भरे गए पद	खाली पद
सामान्य	1,538	935	603
ओबीसी	423	84	339
एससी	308	111	197
एसटी	144	24	120
कुल	2,413	1,154	1,259

एसोसिएट प्रोफेसर

श्रेणी	स्वीकृत पद	भरे गए पद	खाली पद
सामान्य	3,013	2,533	480
ओबीसी	883	275	608
एससी	632	308	324
एसटी	307	108	199
कुल	4,835	3,224	1,611

असिस्टेंट प्रोफेसर

श्रेणी	स्वीकृत पद	भरे गए पद	खाली पद
ओबीसी	2,382	1,838	544
एससी	1,370	1,180	190
एसटी	704	595	109
कुल	4,456	3,613	843

कुलपतियों (VCs) का प्रतिनिधित्व

केंद्रीय विश्वविद्यालयों में कुलपतियों के प्रतिनिधित्व के संबंध में पुराने आँकड़े उपलब्ध हैं:

जुलाई 2023 तक 45 केंद्रीय विश्वविद्यालयों में से, केवल एक कुलपति एससी समुदाय से, एक एसटी समुदाय से और सात ओबीसी समुदाय से थे।

अगस्त 2022 तक 45 केंद्रीय विश्वविद्यालयों में से, केवल एक कुलपति एससी समुदाय से और एक एसटी समुदाय से थे।

विचारकों के दृष्टिकोण से विश्लेषण

(i) **डॉ. आंबेडकर** — डॉ. भीमराव आंबेडकर ने सर्वर्ण मानसिकता को "सामाजिक बंधन" बताया, जहाँ समानता की बात केवल शब्दों में की जाती है।¹⁴

गैल ओम्वेद ने कहा कि सर्वर्ण समाज ने धर्म और संस्कृति के माध्यम से अपनी श्रेष्ठता को "नैतिक वैधता" दी। वहीं एम.एन. श्रीनिवास ने "Sanskritization" की संकल्पना दी, जिसके अनुसार निम्न जातियाँ सर्वर्ण आचरण अपनाकर ऊपर उठने का प्रयास करती हैं— यह सर्वर्ण वर्चस्व के प्रभाव का प्रमाण है।

रजनी कोठारी ने राजनीतिक दृष्टि से बताया कि सर्वर्ण अब भी सत्ता-संरचना के केंद्र में बने हुए हैं, और लोकतंत्र के बावजूद सामाजिक समानता अधूरी है।

(ii) **बाल गंगाधर तिलक (1856–1920)**— बाल गंगाधर तिलक भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के अग्रणी राष्ट्रवादी थे, परंतु सामाजिक दृष्टि से वे परंपरावादी हिंदू चिंतन के निकट थे। उन्होंने "गीता रहस्य" (1915) में कर्मयोग की व्याख्या की, परंतु जाति व्यवस्था को सामाजिक संगठन का अंग माना।

तिलक का विचार जाति-व्यवस्था के सुधार की ओर नहीं, बल्कि उसकी स्थिरता और धार्मिकता की रक्षा की ओर झुका हुआ था। उन्होंने कहा था कि "वर्ण व्यवस्था समाज की स्वाभाविक

रचना है, जो कर्म और गुण पर आधारित है।”

लेकिन व्यवहार में वे ब्राह्मणवादी परंपरा के रक्षक माने गए। उन्होंने विधवा विवाह, स्त्री-शिक्षा और जातिगत समानता जैसे सामाजिक सुधार आंदोलनों का खुला समर्थन नहीं किया—इस कारण फुले-आंबेडकर परंपरा ने उन्हें “सामाजिक सुधार के विरोधी राष्ट्रवादी” कहा।¹⁵

आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन और सवर्ण दृष्टिकोण में परिवर्तन

21वीं सदी में शिक्षा, मीडिया और वैश्वीकरण ने सवर्ण दृष्टिकोण में आंशिक परिवर्तन लाया है। शहरी क्षेत्रों में जाति पर खुलकर चर्चा संभव हुई है, और युवा वर्ग में समानता की भावना बढ़ी है। हालाँकि, ग्रामीण भारत में जातिगत भेदभाव अब भी गहराई से मौजूद है। दलितों के विरुद्ध हिंसा, सामाजिक बहिष्कार, और अंतरजातीय विवाहों का विरोध सवर्ण मानसिकता की स्थायी परतों को उजागर करता है।¹⁶

नए सवर्ण विमर्श में “सामाजिक प्रतिस्पर्धा” और “आर्थिक आरक्षण” की मांग भी उभर रही है, जो इस मानसिक परिवर्तन का प्रतीक है।

भारत में जाति आज भी सामाजिक जीवन के हर स्तर पर गहराई से व्याप्त है। बीते कुछ वर्षों में हुई घटनाएँ इस सच्चाई को उजागर करती हैं कि जातिगत हिंसा और भेदभाव केवल इतिहास का हिस्सा नहीं, बल्कि आज की वास्तविकता है। 2023 में केरल में एक दलित व्यक्ति को मंदिर की निविदा जीतने पर सवर्णों ने सार्वजनिक रूप से अपमानित किया, वहीं केरल के ही मंत्री के राधा कृष्णन को उनकी जाति के कारण मंदिर में दीपक छूने से रोका गया। उज्जैन में 12 वर्षीय दलित बच्ची के साथ हुए अमानवीय व्यवहार से लेकर प्रयागराज में अंबेडकर की मूर्ति तोड़े जाने तक—हर घटना बताती है कि जातिगत श्रेष्ठता की भावना अब भी समाज की नसों में जहर की तरह फैली है।

2024 में भी यह स्थिति नहीं बदली। गुजरात में एक दलित दूल्हे को घोड़ी पर चढ़ने पर पीटा गया, और तमिलनाडु में सवर्णों ने दलितों के मंदिर प्रवेश पर हिंसक विरोध किया। इसी दौरान आँकड़े बताते हैं कि 2018 से 2023 के बीच सीवर साफ करते हुए 400 से अधिक सफाईकर्मियों की मौत हुई—यहाँ भी अधिकांश दलित ही थे। डॉ. भीमराव अंबेडकर ने कहा था, “जब तक जाति का विनाश नहीं होगा, तब तक राजनीतिक या आर्थिक सुधार संभव नहीं।” इन घटनाओं ने उनके शब्दों को और प्रासंगिक बना दिया है।

आँकड़ों में सवर्ण वर्चस्व

अध्ययनों से स्पष्ट है कि समाज के लगभग सभी प्रतिष्ठित क्षेत्रों में सवर्णों का अत्यधिक प्रभुत्व है।

- मीडिया: ऑक्सफैम-न्यूजलॉन्ड्री (2022) की रिपोर्ट बताती है कि टीवी, प्रिंट और डिजिटल मीडिया में 90% नेतृत्व पद सवर्णों के पास हैं।
- शिक्षा: आईआईटी और आईआईएससी जैसे संस्थानों में अनुसूचित जातिध्वनजाति के प्राध्यापक 3% से भी कम हैं।
- न्यायपालिका: 2018–2023 के बीच नियुक्त 650 उच्च न्यायालय न्यायाधीशों में से 76% उच्च जातियों से थे।

- कॉर्पोरेट जगत: 94% सीईओ और निदेशक सवर्ण वर्ग से हैं।

जबकि ये वर्ग कुल जनसंख्या का मात्र 15–20% हैं, यह असंतुलन सामाजिक अन्याय की गहराई को दिखाता है।

मूर्ति तोड़ने और अपमान की घटनाएँ

हर साल डॉ. आंबेडकर जयंती (14 अप्रैल) के आसपास देशभर में कई जगहों पर उनकी प्रतिमाओं को तोड़ने या अपमानित करने की घटनाएँ होती हैं— जो सवर्ण श्रेष्ठता की मानसिकता का जीवंत उदाहरण हैं।¹⁷

मानसिक उत्पीड़न और जातिवाद

वाई. पूरन कुमार की आत्महत्या ने यह स्पष्ट किया है कि उच्च पदों पर रहते हुए भी जातिवादी मानसिकता और मानसिक उत्पीड़न से बचना संभव नहीं है। उनके परिवार ने आरोप लगाया कि प्रशासनिक अधिकारियों ने जानबूझकर उनका मानसिक उत्पीड़न किया, जिससे उनकी मानसिक स्थिति बिगड़ गई। यह घटना यह दर्शाती है कि भारतीय प्रशासनिक व्यवस्था में जातिवाद की जड़ें गहरी हैं।¹⁸

(i) लक्ष्मणपुर बाथे नरसंहार (1997)

लक्ष्मणपुर बाथे गाँव, अरवल जिला, बिहार में 1 दिसंबर 1997 को एक जातिवादी नरसंहार हुआ, जिसमें 58 दलितों की हत्या की गई। यह घटना रणवीर सेना के सदस्यों द्वारा की गई, जो उच्च जाति के थे। यह नरसंहार जातिवाद और राजनीतिक प्रतिशोध का उदाहरण है।¹⁹

(ii) पररिया सामूहिक बलात्कार (1988)

पररिया गाँव, देवघर, बिहार में 1988 में पुलिसकर्मियों द्वारा 26 दलित महिलाओं के साथ सामूहिक बलात्कार किया गया। यह घटना जातिवादी मानसिकता और पुलिसिया अत्याचार को दर्शाती है।²⁰

(iii) अफसर नरसंहार (2000)

नवादा जिले के अफसर गाँव में 2000 में कुर्मी जाति के लोगों ने भूमिहार जाति के 12 लोगों की हत्या की। यह घटना जातिवादी संघर्ष और राजनीतिक प्रतिशोध का परिणाम थी।²¹

(iv) हाथरस की घटना (2020)

हाथरस जिला, उत्तर प्रदेश में 14 सितंबर 2020 को एक 19 वर्षीय दलित लड़की के साथ सामूहिक बलात्कार हुआ, जिसके बाद उसकी मृत्यु हो गई। इस घटना में चार उच्च जाति के पुरुषों को आरोपी बनाया गया। मृत्यु के बाद, पुलिस ने परिवार की अनुमति के बिना शव का अंतिम संस्कार किया, जिससे जातिवादी भेदभाव और प्रशासनिक लापरवाही की ओर इशारा मिलता है।

(v) दमोह जिले में ओबीसी युवक से ब्राह्मण के पैर धोकर पानी पिलवाना

दमोह जिले के सतरिया गांव में एक ओबीसी युवक, पुरुषोत्तम कुशवाहा, को एक ब्राह्मण युवक के पैर धोकर वह पानी पीने को मजबूर किया गया। यह सजा उसे एक ए.आई.—जनित छवि साझा करने के कारण दी गई थी, जिसे ब्राह्मण समुदाय ने अपमानजनक माना। इस घटना का

वीडियो वायरल होने के बाद, मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने इसे “गहरी जातिवादी भेदभाव और मानव गरिमा पर गंभीर आक्रमण” करार देते हुए राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम (NSA) के तहत कार्रवाई का आदेश दिया।²²

(vi) राजस्थान के जालौर जिले के सुराणा गांव में 9 वर्षीय दलित छात्र इन्द्रा मेघवाल की हत्या ने भारतीय समाज में जातिवाद की गहरी जड़ों और उसकी भयावहता को उजागर किया है। यह घटना न केवल एक निर्दोष बच्चे की हत्या है, बल्कि यह जातिवाद के खिलाफ संघर्ष की आवश्यकता को भी रेखांकित करती है। इन्द्रा मेघवाल, जो Saraswati Vidya Mandir नामक निजी विद्यालय में कक्षा 4 का छात्र था, 20 जुलाई 2022 को प्यास बुझाने के लिए शिक्षक के पानी के मटके से पानी पीने लगा। यह मटका केवल उच्च जातियों के लिए आरक्षित था। शिक्षक चौल सिंह ने इन्द्रा को इस कारण बेरहमी से पीटा, जिससे वह गंभीर रूप से घायल हो गया। उसे इलाज के लिए अहमदाबाद ले जाया गया, लेकिन 13 अगस्त 2022 को उसकी मृत्यु हो गई।²³

(vii) CJI बी.आर. गवई (2025)

वरिष्ठ पत्रकार वीर सांघवी – “Shoe attack on CJI Gavai shows how caste prejudice flourishes at the top of the Indian state” में यह बताया गया है कि भारत के सर्वोच्च न्यायिक पद पर बैठे एक दलित न्यायाधीश (CJI बी.आर. गवई) पर जूता फेंकने की घटना केवल व्यक्तिगत हमला नहीं थी, बल्कि यह दिखाती है कि जातिगत भेदभाव अब भी भारत के उच्चतम स्तरों तक फैला हुआ है।

गवई के खिलाफ हिंदुत्व समर्थक समूहों ने उन्हें “सनातन विरोधी” बताते हुए सोशल मीडिया पर नफरत फैलाई। “सनातन धर्म” शब्द का प्रयोग यहाँ ब्राह्मणवादी वर्चस्व के प्रतीक के रूप में हुआ, जिससे यह संकेत मिला कि एक दलित व्यक्ति को “सनातन” व्यवस्था में स्थान नहीं है। अंततः एक अधिवक्ता ने अदालत में उन पर जूता फेंका और इसे “दैवी प्रेरणा” बताया।

प्रधानमंत्री मोदी ने घटना के कई घंटे बाद निंदा की, जिसे लेखक ने राजनीतिक रूप से आवश्यक लेकिन सीमित प्रतिक्रिया कहा। मोदी दलित वोटों को साधने की कोशिश करते हैं, परंतु अपने कट्टर समर्थक वर्ग से दूरी नहीं बना सकते।

यह नफरत केवल धर्म से बढ़कर जाति पर केंद्रित हो गई, तो यह न केवल दलितों बल्कि स्वयं प्रधानमंत्री की राजनीतिक छवि को भी नुकसान पहुँचा सकती है।

निष्कर्ष

सवर्णों की यह सुविधाजनक अज्ञानता तब और स्पष्ट होती है जब वे कहते हैं— “जाति कहाँ है?”, “क्या यह अब भी मौजूद है?” – जबकि वही लोग अपने सामाजिक विशेषाधिकारों का प्रतिदिन उपयोग करते हैं। यह अज्ञानता अनजाने में नहीं, बल्कि जातिगत गर्व और वर्चस्व की रक्षा के लिए जानबूझकर अपनाई गई रणनीति है। सवर्ण दृष्टिकोण का इतिहास जटिल, विरोधाभासी और परिवर्तनशील रहा है। एक ओर यह दृष्टिकोण “श्रेष्ठता” और “धार्मिक मान्यता” के आधार पर असमानता को पोषित करता है, वहीं दूसरी ओर आधुनिकता और संवैधानिक मूल्य इसे चुनौती देते हैं।

डॉ. आंबेडकर ने कहा था— “समानता और बंधुत्व के बिना स्वतंत्रता अधूरी है।” आज भारत को आवश्यकता है ऐसी सामाजिक चेतना की, जहाँ सवर्ण और अवर्ण के बीच का अंतर केवल इतिहास में दर्ज रहे, न कि वर्तमान में जीवित।

वाई. पूरन कुमार की आत्महत्या ने यह सिद्ध कर दिया कि जातिवाद केवल निम्न वर्ग के लोगों तक सीमित नहीं है, बल्कि उच्च पदों पर बैठे अधिकारियों को भी प्रभावित करता है। यह घटना प्रशासनिक व्यवस्था में सुधार की आवश्यकता को रेखांकित करती है। जातिवाद के खिलाफ ठोस कदम उठाने और मानसिक उत्पीड़न के मामलों में त्वरित कार्रवाई की आवश्यकता है।

जब तक सवर्ण मानसिकता “समानता” को अपने अस्तित्व के साथ जोड़कर नहीं देखती, तब तक सच्चा सामाजिक न्याय अधूरा रहेगा।

संदर्भ

1. Ambedkar, B. R. (1936). *Annihilation of Caste*. Bombay: Government of India Press, Pg. **56–58**.
2. Dumont, L. (1970). *Homo Hierarchicus: The Caste System and Its Implications*. Paris: Gallimard. (Pg. **33**)
3. Srinivas, M. N. (1962). *Caste in Modern India and Other Essays*. Bombay: Asia Publishing House. (Pg. **45**)
4. Omvedt, G. (2008). *Understanding Caste: From Buddha to Ambedkar and Beyond*. New Delhi: Orient BlackSwan. (Pg. **102–105**).
5. Ambedkar, B. R. (1936). *Annihilation of Caste*. Bombay: Government of India Press, Pg. **56–58**.
6. Manusmriti, ‘M’/8, 6 M 2 K Pg. **270–271**.
7. Shankara Bhashya on Bhagavad Gita 18. Pg. **41–44**.
8. Omvedt, G. (2006). *Dalit Visions: The Anti-caste Movement and the Construction of an Indian Identity*. New Delhi: Orient Longman, Pg. **91–93**
9. Sharma, R. P. (2015). *Ambedkar and Nationhood*. Indian Journal of Social Thought, 7(2), Pg. **44–56**.
10. Bayly, S. (1999). *Caste, Society and Politics in India*. Cambridge University Press, Pg. **76**.
11. Jaffrelot, C. (2003). *India’s Silent Revolution: The Rise of the Lower Castes in North India*. New York: Columbia University Press, Pg. **118**.
12. Kumar, K. (2010). *Mass Media and Social Change in India*. New Delhi: Rawat Publications, Pg. **211**.

13. <https://indianexpress.com/article/india/80-prof-posts-for-obcs-83-for-sts-in-central-universities-are-vacant-says-govt->
14. Ambedkar, B. R. (1936). *Annihilation of Caste*. Bombay: Government of India Press, Pg. **58**.
15. Omvedt, G. (2008). *Understanding Caste: From Buddha to Ambedkar and Beyond*. New Delhi: Orient BlackSwan. (Pg. **133**)
16. Deshpande, S. (2013). *Contemporary India: A Sociological View*. Penguin, Pg. **58**.
17. *Indian Express* (2023). "Over 50 incidents of Ambedkar statue vandalism reported in Uttar Pradesh in a decade." and *The Print* (2020). "Dalits protest as Ambedkar statue vandalized in Meerut."
18. Indian Express, "Haryana officer suicide: What has happened so far in the Y Puran Kumar case"
19. Wikipedia
20. Wikipedia
21. Wikipedia
22. www.ndtv.com
23. <https://www.ndtv.com/india-news/in-dalit-boys-death-in-rajasthan-caste-crime-a-storm-breeds-for-congress->